# BIPOLAR - DISORDER द्विध्रुवीय-विकृति

यह एक मनोदशा विकृति का ऐसा प्रकार है जिसमे सम्बन्धित व्यक्ति कभी अति प्रसन्न या उत्साही तो कभी अति दुखी या उदासी की मनःस्थित तो कभी इन दोनो के बीच समान्य सा बना रहता है. कभी-कभी इसका कोई-कोई रोगी सुख तथा दु:ख दोनो के मिश्रित लक्षणों को एक साथ प्रकट करता है. द्विध्रुवीय विकृति को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जाता है -

1. **CYCLOTHYMIC DISORDER** → मनोदशा विकृति मे रोगी में विगत दो वर्षों से डाईस्थीमिया से मिलते-जुलते लक्षण पाये जाते है, परन्तु साथ में अल्पोन्माद के लक्षण भी पाये जाते है. हालांकि इन दोनों (विषाद एवं अल्पोन्मादी) व्यहारो कि गम्भीरता अधिक नही होती है।

2. **BIPOLAR I DISORDER** → इस विकृति मे रोगी बड़ा विषादी विकृति की तरह एक या इससे अधिक विषादी घटना कि अनुभूति करने के साथ-साथ या इससे अधिक उन्मादी घटना की भी अनुभूति कर चुका होता है।

3. **BIPOLAR II DISORDER** → इस विकृति मे रोगी को बड़ा विषादी विकृति (Mejor depressive Disorder) के लक्षण के अर्थात एक या अधिक विषादी घटना के सथ, एक या इससे अधिक अल्पोन्मादी (Hypomania) घटना का अनुभव हो चुका होता है।

अन्य असामन्यताओ की भांति द्विध्रुवीय विकृति के लक्षण या उन्माद विषाद विकृति के पूर्वनिहित तथा तात्कालिक कारको की व्याख्या हेतु संभावित जैविक, मनोवैज्ञानिक तथा समाजिक कारको का विवेचन समाचीन है।

विभिन्न अनुसंधानो से यह स्पष्ट हुआ है कि इस रोग से पीड़ित रोगियो में अधिकतर रोगियो के अभिभावको अथवा निकट के सम्बन्धियो के भी रोग से पीड़ित होने का स्पष्ट इतिहास होता है।

द्विध्रुवीय विकृति की उत्पति हेतु कुछ जैव रासयनिक असामान्यताएँ भी जिम्मेदार होती है, पोस्ट एवं उनके सहयोगियो (1980) ने पाया कि मस्तिष्क मे नॉरएपीनेफ्राइन-युक्त ट्रासमिटर का उच्च स्तर सम्बन्धित व्यक्ति मे उन्मादी लक्षणों को उत्पन कर देता है। इसी तरह मस्तिष्क मे सेरोटिन की निम्न उपलब्धता व्यक्ति में उन्माद अवस्था को उत्पन कर देता है। मेलजर (1991) ने उन्माद विषाद के लक्षणो की उत्पति हेतु मस्तिष्क मे न्यूरॉन झिल्लीयो में सोडियम आयन्स के संचार का दोषपूर्ण होना माना है।

वस्तुतः उन्माद विषाद या द्विध्रुवीय विकार एक मानसिक रोग है अतः इसकी उत्पति में विभिन्न मनोवैज्ञानिक एवं समाजिक कारक भी विशिष्ट भूमिका अदा करते देखे जाते है उदाहरणार्थ- कुसमायोजन हीनता की भावना, लैंगिक इच्छाओं का प्रतिगमन (Regression) व्यक्तित्व विशेषताएँ, पारिवारिक कारक, समाजिक प्रथाएँ एवं परम्परायें, आर्थिक विषमता दोषपूर्ण समाजिक शिक्षा इत्यादी

**द्विध्रुवीय विकृति या उन्माद विषाद विकृति का उपचार निम्नलिखित तरह कि प्रविधियो के द्वारा किया जाता है:-**

1. **जैविक चिकित्सा (Biological Therapy)** → इन दिनो इस विकृति के उपचार हेतु मुख्यतः तीन तरह की जैविक चिकित्सा विधि उपयोग मे लाई जाती है।

A. **औषधीय चिकित्सा DRUG THERAPY** → उन्माद विषाद विकृति से पीड़ित रोगियो को सामान्यतः दो प्रकार की प्रशान्तक औषधियों - क्लोरप्रोमाजिन (Cholopromazine) और रेसरपिन (Reserprine) का सेवन

कराया जाता है। क्लोरप्रोमाजिन हाईपोथेलेमस को प्रभावित करता है जबकि रैसरप्रिन - रेटिकुलर एक्टिवेटिंग सिस्टम - आर० ए० एस० पर प्रभाव डालता है। इसके कारण रोगी की संवेगात्मक उग्रता में कमी आती है। वर्तमान में द्विध्रुवीय विकृति से ग्रस्त लोगों के चिकित्सा लीथियम - कार्बोनेट नामक रसायनिक द्रव्य से बनी औषधि के द्वारा की जाती है, जिसे लिथियम चिकित्सा कहा जाता है। यह औषधि मस्तिष्क में नॉरएपिनेफाईन के स्तर को कम कर देती है, जिससे इस विकृति के लक्षण नियंत्रित हो जाते हैं, लेकिन इसका प्रयोग हानिकारक होता है क्योंकि इसके Side Effects उत्पन्न हो जाते हैं।

(B) आघात चिकित्सा (SHOCK THERAPY) -> इस प्रविधि में रोगी के मस्तिष्क में रसायनिक द्रव्यों अथवा विद्युत प्रवाह द्वारा आघात पहुँचाकर इसे रोग मुक्त किया जाता है. इसके अंतर्गत इन्सुलिन आघात चिकित्सा (Insulin Shock therapy IST) मेट्रोजोल चिकित्सा तथा विद्युत आघात चिकित्सा के द्वारा रोगी को कृत्रिम ढंग से आघात पहुँचाया जाता है, जिससे तंत्रिका तंत्र कि असामान्यताएँ बिखर जाती हैं तथा अत्यधी विष Organic Toxication) दूर हो जाती है. इसका परिणाम यह होता है कि स्नायु कोषों की चंचलता अथवा उत्तेजना भी शिथिल पड जाती है और रोगी के भावानात्मक लक्षण मन्द पड जाते हैं।

(C) मनश्चिकित्सा (PSYCHOTHERAPY) -> जब औषधि और आघात चिकित्सा के पश्चात रोग थोडा नियंत्रण मे आ जाता है तब रोगी को स्थायी आराम पहुँचाने के लिए विभिन्न मनश्चिकित्सा प्रविधियो का प्रयोग किया जाता है। सामान्यत: इस विकृति के उपचार में समूह चिकित्सा (Group therapy) संसूचन (Suggestion) एवं पुन: शिक्षण (RE Education) विधियो का उपयोग लाभकारी होता है।

रोगी का उपचार करते वक्त मनोचिकित्सक व नैदानिक मनोवैज्ञानिक रोगी के प्रति सहानुभूति सद्भाव व स्नेह व्यक्त करके अथवा इसका विश्वास हासिल करके इसकी आत्म-प्रतिमा (Self Image) को सुधारने व समान्य बनाने का प्रयास करता है ऐसा लम्बे समय तक करते रहने से रोगी मे उपयुक्त परिपक्व सामर्थ्य एवं आत्मबोध विकसित हो जाते है। इसके फलस्वरूप रोगी मे विभिन्न परिस्थितियो के प्रति अच्छी तरह समायोजन स्थापित करने की योग्यता भी विकसित हो जाती है, तब स्वभावतः रोगी की स्थिति मे स्थाई सुधार परिलक्षित होता है।